



Neutral Citation No. - 2019:AHC:4704

एएफआर

23.5.2018 को आरक्षित

10.01.2019 को प्रदत्त

वाद :- अनुच्छेद 227 के अंतर्गत मामले संख्या - 3634/2018

याचिकाकर्ता:- शफीउद्दीन

प्रतिवादी:- मशहूर आलम

याचिकाकर्ता के वकील:- विशाल अग्रवाल

प्रतिवादी के वकील:- आशीष गोयल

माननीय न्यायमूर्ति श्रीमती संगीता चंद्रा

1. याचिकाकर्ता के विद्वान वकील श्री विशाल अग्रवाल और प्रतिवादियों के विद्वान वकील श्री आशीष गोयल को सुना गया।

2. यह रिट याचिका याचिकाकर्ता/किराएदार द्वारा जिला न्यायाधीश, हाथरस द्वारा एस.सी.सी. पुनरीक्षण संख्या 101/2018 में पारित दिनांक 9.4.2018 के आदेश और विद्वान ट्रायल कोर्ट द्वारा एस.सी.सी. वाद संख्या 7/2013 में पारित दिनांक 9.3.2018 के आदेश को चुनौती देते हुए दायर की गई है, जिसमें मकान मालिक द्वारा वाद को नियमित वाद में परिवर्तित करने के लिए धारा 151 सिविल प्रक्रिया संहिता (जिसे आगे 'सी.पी.सी.' कहा जाएगा) के तहत आवेदन को अनुमति दी गई है।

3. याचिकाकर्ता का मामला यह है कि वह चौधरी मार्केट, मालफ कॉम्प्लेक्स, सादाबाद, हाथरस में स्थित दुकान का 1,000 रुपये प्रति माह की दर से किरायेदार है।

4. मकान मालिक/प्रतिवादी ने याचिकाकर्ता/किराएदार के खिलाफ बेदखली के लिए एससीसी मुकदमा संख्या 1/2010 दायर किया और आरोप लगाया कि किराया बकाया हो गया है। शिकायत में आरोप लगाया गया कि दुकान को केवल मौखिक समझौते पर किराए पर दिया गया था और किराएदारी महीने-दर-महीने थी। यह सहमति बनी थी कि जब मकान मालिक को दुकान की आवश्यकता होगी, तो किराएदार इसे खाली कर देगा।

5. यह भी कहा गया कि उक्त दुकान पर उत्तर प्रदेश किराया नियंत्रण अधिनियम, 1972 के प्रावधान लागू नहीं होते हैं, क्योंकि यह एक नया निर्माण था, तथा मार्च 2009 से किरायेदार ने दुकान बंद कर दी थी और किराया नहीं दे रहा था। मकान मालिक द्वारा किरायेदारी निर्धारित

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



करने तथा बकाया किराया मांगने के लिए 29.9.2010 को एक कानूनी नोटिस दिया गया था, जो किरायेदार को 1.10.2010 को दिया गया था तथा किरायेदार द्वारा 20.10.2010 को इसका उत्तर भी दिया गया था। नोटिस के उत्तर में किरायेदार ने आरोप लगाया था कि मकान मालिक को किरायेदारी निर्धारित करने का कोई अधिकार नहीं है।

6. एस.सी.सी. मुकदमे में दावा की गई राहत केवल किराएदार को बेदखल करने और न्यायालय द्वारा नियुक्त आयुक्त के माध्यम से दुकान का कब्जा मकान मालिक को सौंपने के लिए थी। एकमात्र अन्य राहत जिसका दावा किया गया था वह मुकदमे की लागत के लिए भी किराएदार द्वारा मकान मालिक को भुगतान करने का निर्देश दिया जाना था।

7. याचिकाकर्ता/किराएदार ने लिखित बयान दाखिल कर शिकायत की विषय-वस्तु का खंडन किया तथा आरोप लगाया कि मकान मालिक द्वारा संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 111(एच) के तहत दिया गया कानूनी नोटिस अवैध है, क्योंकि मकान मालिक ने वर्ष 2007 में किरायेदार को संबंधित दुकान दी थी तथा 2,20,000/- रुपये प्रीमियम/पगड़ी के रूप में मौखिक रूप से यह समझौता किया था कि जब किरायेदार संबंधित दुकान खाली करेगा तो उसे प्रीमियम की राशि वापस कर दी जाएगी। आरोप लगाया गया कि किरायेदार हमेशा से मकान मालिक को किराया देता रहा है तथा जब मकान मालिक ने किराया लेने से इनकार कर दिया तो उसने सिविल जज (जूनियर डिवीजन) के समक्ष उत्तर प्रदेश किराया नियंत्रण अधिनियम की धारा 30 के तहत किराया भी जमा कर दिया था। दुकान 2007 से किराएदार के कब्जे में थी और वह उसी में रेडीमेड गारमेंट का कारोबार कर रहा था और यह दुकान 2009 से बंद नहीं हुई थी जैसा कि शिकायत में आरोप लगाया गया है। धारा 111 (एच) के तहत दिया गया नोटिस अवैध था, इसके बजाय संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 106 के तहत नोटिस दिया जाना चाहिए था।

8. यह भी आरोप लगाया गया कि मकान मालिक की गलत मंशा को देखते हुए किरायेदार ने मकान मालिक को कानून के अनुसार किरायेदार को मकान बनाने से रोकने के लिए मूल मुकदमा संख्या 31/2010 (शफीक उद्दीन बनाम मंसूर आलम) भी दायर किया था, इसलिए एससीसी मुकदमे की सुनवाई मूल मुकदमा संख्या 31/2010 के लंबित रहने तक रोक दी जानी चाहिए।

9. एस.सी.सी. मुकदमे में दोनों पक्षों की ओर से साक्ष्य प्रस्तुत किए गए। बाद में, एक आवेदन पत्र संख्या 35-सी (2) के साथ प्रस्तुत किया गया, जिसमें कहा गया कि प्रारंभ में एस.सी.सी. मुकदमा एस.सी.सी. मुकदमा संख्या 1/2010 के रूप में पंजीकृत किया गया था, लेकिन बाद में संबंधित न्यायालय द्वारा इसे नियमित मुकदमा संख्या 7/2013 में परिवर्तित कर दिया गया,

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



तथा उक्त मुकदमे में वही साक्ष्य/मौखिक कथन/शपथपत्र साक्ष्य के रूप में माने जाने थे, जो एस.सी.सी. मुकदमे में थे।

10. किरायेदार ने आपत्ति अर्थात् पत्र संख्या 36-सी(2) दाखिल करते हुए कहा कि उक्त आवेदन पोषणीय नहीं है। मूलतः वाद एस.सी.सी. वाद के रूप में पंजीकृत था, इसे विधिक रूप से नियमित पक्ष में मूल वाद में परिवर्तित नहीं किया गया था, और यदि ऐसा होता भी तो एस.सी.सी. वाद में पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य को नियमित वाद संख्या 7/2013 में साक्ष्य के रूप में नहीं पढ़ा जा सकता।

11. विद्वान एस.सी.सी. न्यायालय अर्थात् सिविल जज (जूनियर डिवीजन), सादाबाद, हाथरस ने अपने आदेश दिनांक 22.10.2013 में पाया कि एस.सी.सी. वाद में साक्ष्य पहले ही दर्ज किया जा चुका है, जिस पर किसी भी पक्ष द्वारा विवाद नहीं किया जा रहा है। कोई नया साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया जाना था, इसके अलावा प्रतिवादी पहले से लिए गए साक्ष्य पर विवाद नहीं कर रहा था, इसलिए यह न्याय के हित में होगा, यदि किसी भी पक्ष द्वारा पहले से प्रस्तुत साक्ष्य को मूल वाद में भी पढ़ा जाए। मामले की पुनः सुनवाई 26.11.2013 को निर्धारित की गई।

12. दिनांक 22.10.2013 के आदेश से व्यथित होकर किरायेदार ने विद्वान जिला न्यायाधीश के समक्ष संशोधन संख्या 1/2014 दायर किया, जिसे दिनांक 18.12.2014 को स्वीकार कर लिया गया तथा संशोधन न्यायालय ने दोनों पक्षों को सुनवाई का अवसर देने के पश्चात् मामले को पुनः विचारार्थ सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिवीजन) के पास वापस भेज दिया। दिनांक 18.12.2014 के आदेश को मकान मालिक द्वारा आगे चुनौती नहीं दी गई तथा इसे अंतिम रूप दिया गया।

13. तत्पश्चात् दिनांक 9.12.2015 को मकान मालिक द्वारा पुनः धारा 151 सीपीसी के अन्तर्गत प्रार्थना पत्र प्रस्तुत किया गया कि एस.सी.सी. वाद को मूल वाद के रूप में पंजीकृत किया जाए। उक्त प्रार्थना पत्र में यह भी उल्लेख किया गया था कि विचाराधीन दुकान उत्तर प्रदेश किराया नियंत्रण अधिनियम के अन्तर्गत नहीं आती है। इसका निर्माण लगभग 15 वर्ष पूर्व ही हुआ था। वाद संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 111(एच) के अन्तर्गत प्रस्तुत किया गया था, जिसके लिए मूल पक्ष की ओर से नियमित वाद पोषणीय था, किन्तु इसे गलत तरीके से एस.सी.सी. वाद के रूप में पंजीकृत कर दिया गया था। दोनों पक्षों द्वारा साक्ष्य प्रस्तुत किए गए थे, जिसमें गलत तरीके से इसे एस.सी.सी. वाद माना गया था।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



14. याचिकाकर्ता/किराएदार ने इस तरह के आवेदन पर आपत्ति जताते हुए कहा कि एससीसी मुकदमे को नियमित मुकदमे के रूप में पंजीकृत करने का कोई प्रावधान नहीं है। कानून में इस स्थापित स्थिति को रिविजनल कोर्ट ने 18.12.2014 को अपने आदेश में भी नोट किया था, जबकि 2014 के संशोधन संख्या 1 को अनुमति दी थी।

15. यह आरोप लगाया गया है कि विद्वान ट्रायल कोर्ट ने धारा 151 सीपीसी के तहत इस तरह के आवेदन की स्थिरता पर विचार किए बिना ही अपने दिनांक 9.3.2018 के आदेश द्वारा इसे अनुमति दे दी। यह प्रस्तुत किया गया है कि दिनांक 9.3.2018 का आदेश पूर्व के संशोधन न्यायालय के दिनांक 18.12.2014 के आदेश पर विस्तृत विचार किए बिना है।

16. विद्वान ट्रायल कोर्ट ने दिनांक 9.3.2018 के आदेश में पाया है कि पहले किरायेदार ने वाद वापस करने के लिए आदेश 7 नियम 11 के तहत आपत्ति दायर की थी। इसकी विषय-वस्तु को देखने के बाद, विद्वान ट्रायल कोर्ट ने धारा 151 सीपीसी के तहत अपनी अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग करते हुए एससीसी वाद को नियमित वाद में परिवर्तित कर दिया था। वाद के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि यह संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 111 (एच) के तहत दायर किया गया था और ऐसा आवेदन/वाद केवल नियमित वाद के रूप में ही स्वीकार्य है। पहले के आदेश को केवल इसलिए रद्द कर दिया गया है क्योंकि पुनरीक्षण न्यायालय ने पाया कि एससीसी वाद सारांश प्रकृति की कार्यवाही थी जबकि नियमित वाद के लिए विस्तृत प्रक्रिया का पालन करने की आवश्यकता होती है और यदि नियमित वाद में वही साक्ष्य पढ़ा जाता तो प्रतिवादी को उचित अवसर नहीं मिलता। चूंकि, पुनरीक्षण न्यायालय ने सुनवाई का उचित अवसर न दिए जाने के आधार पर ही पिछले आदेश को रद्द कर दिया था, इसलिए यदि एससीसी मुकदमे को नियमित मुकदमे में परिवर्तित करते समय पक्षकारों को अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए समय दिया जाता है, तो इससे कोई नुकसान नहीं होगा।

17. विद्वान विचारण न्यायालय अर्थात् सिविल जज (जूनियर डिवीजन), हाथरस ने पाया कि शिकायत की विषय-वस्तु के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि इसे नियमित वाद के रूप में पंजीकृत किया जाना चाहिए था, लेकिन शिकायत के वाद शीर्षक में मुद्रण संबंधी त्रुटि के कारण, इसे मुंसरिम द्वारा एस.सी.सी. वाद के रूप में पंजीकृत कर दिया गया था। इसने पाया कि स्वरूप को नहीं बल्कि सार को देखा जाना चाहिए, जिससे स्पष्ट है कि पट्टेदार को बेदखल करने के लिए संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 111(एच) के तहत शिकायत को एस.सी.सी. वाद के रूप में पंजीकृत नहीं किया जा सकता था। चूंकि, इसे मुंसरिम द्वारा अनजाने में एस.सी.सी. वाद के रूप में पंजीकृत कर दिया गया था, इसलिए न्यायालय के किसी कार्य से वादी के प्रति पूर्वाग्रह उत्पन्न नहीं होना चाहिए, तथा धारा 151 सी.पी.सी. के तहत निहित अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए, न्यायालय निश्चित रूप से एस.सी.सी. वाद को

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



नियमित वाद में परिवर्तित करने का निर्देश दे सकता है। हालांकि, दोनों पक्षों द्वारा अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया क्योंकि एससीसी मुकदमा संक्षिप्त प्रकृति का है और नियमित मुकदमे में विस्तृत सुनवाई की आवश्यकता होती है।

18. इसके बाद याचिकाकर्ता/किराएदार ने 19.3.2018 के आदेश को चुनौती देते हुए पुनरीक्षण न्यायालय का दरवाजा खटखटाया।

19. इस बार पुनरीक्षण न्यायालय ने 9.4.2018 के अपने आदेश द्वारा पुनरीक्षण संख्या 101/2018 को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि विद्वान निचली अदालत ने दोनों पक्षों को अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुमति दी थी। साथ ही, इस तरह के आवेदन की अनुमति देने के लिए वादी/मकान मालिक पर कुछ लागत लगाई गई थी, इसलिए किरायेदार को कोई गंभीर नुकसान नहीं हुआ। चूंकि, वाद में किराये की वसूली का दावा नहीं किया गया था और इसे संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 111(एच) के तहत दायर किया गया था और केवल शीर्षक में टाइपोग्राफिकल त्रुटि के कारण इसे एससीसी सूट के रूप में दर्शाया गया था, इसलिए इसे पहले के अवसर पर नियमित सूट के रूप में पंजीकृत नहीं किया जा सका। यह विवादित नहीं था कि विचाराधीन दुकान लगभग दस साल पहले बनाई गई थी और यू.पी. अधिनियम संख्या 13, 1972 लागू नहीं था, इसलिए इसे या तो एस.सी.सी. मुकदमे के रूप में या फिर नियमित मुकदमे के रूप में आगे बढ़ाया जाना था। इस मामले में धर्मांतरण के निर्देश दिए जाने के बाद, विद्वान ट्रायल कोर्ट ने दोनों पक्षों को अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए सुनवाई का उचित अवसर भी दिया था। यह देखा गया कि यदि वादी या अधिकारी द्वारा कोई गलती की गई थी, तो विद्वान लोअर कोर्ट धारा 151 सी.पी.सी. के तहत इसे सुधारने का हकदार था।

20. 9.4.2018 के इस आदेश के खिलाफ याचिकाकर्ता ने इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है।

21. याचिकाकर्ता/किराएदार के विद्वान वकील ने तर्क दिया कि मूल रूप से मकान मालिक ने किराए के बकाया की वसूली के लिए कोई प्रार्थना किए बिना अकेले किरायेदार को बेदखल करने के लिए मुकदमा दायर किया था। इसे एससीसी मुकदमे के रूप में पंजीकृत किया गया था और पक्षों द्वारा विद्वान ट्रायल कोर्ट के समक्ष साक्ष्य प्रस्तुत किए गए थे। इसके बाद, साक्ष्य के बंद होने पर, प्रतिवादी मकान मालिक ने धारा 151 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत एक प्रार्थना के साथ आवेदन किया कि एससीसी मुकदमे को मूल मुकदमे के रूप में पंजीकृत किया जाए। दलीलों या राहत खंड में संशोधन के संबंध में कोई प्रार्थना नहीं की गई थी। धारा 151 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत दायर आवेदन में एकमात्र दलील यह थी कि राहत खंड में बेदखली की मांग की गई थी और बेदखली के लिए लिया गया आधार संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



111 (एच) के तहत था। इसलिए, इसे एससीसी मुकदमे के रूप में नहीं बल्कि एक नियमित मुकदमे के रूप में पंजीकृत किया जाना चाहिए था। धारा 151 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत इस आवेदन को विद्वान ट्रायल कोर्ट द्वारा 22.10.2013 को शुरू में अनुमति दी गई थी।

22. संशोधन न्यायालय ने दिनांक 18.12.2014 के अपने आदेश में उल्लिखित बिंदुओं के संबंध में मामले को नए सिरे से विचार के लिए विद्वान ट्रायल कोर्ट को वापस भेज दिया।

23. मामले को वापस भेजने के बाद, प्रतिवादी/मकान मालिक द्वारा एक नया आवेदन प्रस्तुत किया गया, जिस पर विद्वान ट्रायल कोर्ट ने दिनांक 9.3.2018 के अपने आदेश द्वारा विचार किया और इसे इस टिप्पणी के साथ अनुमति दी कि निस्संदेह एससीसी मुकदमा सारांश प्रकृति की कार्यवाही है और प्रस्तुत साक्ष्य अपर्याप्त हो सकते हैं। इसलिए, दोनों पक्षों को अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर दिया जाता है, यदि वे ऐसा करना चाहते हैं।

24. इस आदेश दिनांक 19.3.2018 को याचिकाकर्ता/किराएदार द्वारा दिनांक 9.4.2018 के आदेश द्वारा संशोधन संख्या 101/2018 के रूप में पंजीकृत संशोधन को प्राथमिकता देते हुए चुनौती दी गई थी। संशोधन न्यायालय ने पाया है कि धारा 151 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत, निचली अदालत को एससीसी सूट के रूप में मुकदमा पंजीकृत करने में शुरू में की गई त्रुटि को ठीक करने का अधिकार है, जबकि राहत खंड केवल किरायेदार की बेदखली तक सीमित था और वसूल किए जाने वाले किराए के बकाया के संबंध में कोई दावा नहीं किया गया था।

25. याचिकाकर्ता/किराएदार के विद्वान वकील ने तर्क दिया है कि विद्वान ट्रायल कोर्ट द्वारा दिनांक 19.3.2018 को पारित आदेश और संशोधन न्यायालय द्वारा दिनांक 9.4.2018 को पारित आदेश कानून के स्थापित सिद्धांतों के विरुद्ध है। भले ही वही न्यायालय नियमित रूप से लघु वाद न्यायालय के न्यायाधीश और सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिवीजन) के रूप में शक्ति का प्रयोग कर रहा था, लेकिन वह मुकदमे की प्रकृति को पूरी तरह से बदलने वाले ऐसे रूपांतरण की अनुमति नहीं दे सकता था।

26. दूसरी ओर प्रतिवादी/मकान मालिक के विद्वान वकील ने तर्क दिया है कि प्रतिवादी/मकान मालिक द्वारा राहत खंड में कभी कोई बदलाव नहीं किया गया, यह वही रहा, अर्थात् दावा की गई राहत किरायेदार को बेदखल करने के संबंध में थी। इसलिए, यदि शुरू में मुकदमा गलत तरीके से एससीसी मुकदमे के रूप में पंजीकृत किया गया था, तो यह केवल इसलिए था क्योंकि विचाराधीन मुकदमे के कारण शीर्षक में गलत उल्लेख किया गया था कि यह एक एससीसी मुकदमा है। मुकदमे का एससीसी मुकदमे के रूप में गलत पंजीकरण किसी भी तरह से इसे नियमित मुकदमे के रूप में मानने से नहीं रोकेगा और अन्यथा भी गलत पंजीकरण के संबंध में

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



सुधार संबंधित न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में था, और इसलिए धारा 151 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत आवेदन को सही तरीके से अनुमति दी गई है। सभी न्यायालय रिकॉर्ड में स्पष्ट रूप से दिखाई देने वाली किसी भी त्रुटि को सुधारने के लिए अपने अधिकार क्षेत्र में कार्य करते हैं। इसके अलावा, ट्रायल कोर्ट ने इस तथ्य पर भी विचार किया था कि साक्ष्य को एससीसी मुकदमे के रूप में सारांश कार्यवाही के रूप में माना गया था। इसलिए, अब जब मुकदमा नियमित मुकदमे में परिवर्तित हो गया है, तो दोनों पक्षों को अतिरिक्त साक्ष्य, यदि कोई हो, पेश करने का अवसर दिया गया है।

27. प्रतिवादी/मकान मालिक के विद्वान वकील ने कुछ निर्णयों पर भरोसा किया है, जिनकी फोटोकॉपी सुनवाई समाप्त होने के बाद 15.5.2018 को दी गई है।

28. पहला मामला राम कुमार अग्रवाल बनाम जिला न्यायाधीश, मैनपुरी 1999 (4) ए.डब्ल्यू.सी. 3394 है, जिसमें सिविल न्यायाधीश (वरिष्ठ प्रभाग), मैनपुरी ने माना कि मोटर वाहन अधिनियम की धारा 94 के तहत मुकदमा वर्जित है। इसके बाद वादी द्वारा दायर सिविल अपील में, जिला न्यायाधीश, मैनपुरी ने माना कि विवादित बस के स्वामित्व की घोषणा और विवादित बस पर कब्जे में हस्तक्षेप करने से प्रतिवादी को रोकने के लिए निषेधाज्ञा के लिए मुकदमा सिविल न्यायालय द्वारा विचारणीय है। उच्च न्यायालय के समक्ष यह तर्क दिया गया कि आदेश VII, नियम 10 में यह प्रावधान है कि जिस न्यायालय में मुकदमा संस्थित किया जाना चाहिए था, उसे प्रस्तुत करने के लिए वाद वापस किया जा सकता है। चूंकि, उक्त न्यायालय द्वारा वाद को उस न्यायालय में प्रस्तुत करने के लिए वापस नहीं किया गया था जिसमें वाद संस्थित किया जाना चाहिए था, बल्कि वाद को पोषणीय न मानते हुए खारिज कर दिया गया था, इसलिए उक्त आदेश को सीपीसी के आदेश VII, नियम 10 के तहत आदेश नहीं माना जा सकता। जब तक कि आदेश VII, नियम 10 के तहत आदेश न हो, यह अपील योग्य नहीं था। हालांकि, यह सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 के तहत पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार के अधीन होगा। हालांकि उच्च न्यायालय ने पाया कि विद्वान जिला न्यायाधीश के पास उक्त आदेश के तहत अपील के साथ-साथ सिविल पुनरीक्षण पर भी विचार करने का क्षेत्राधिकार है। इसलिए, भले ही अपील को अपील के रूप में मानते हुए निर्णय लिया गया हो, फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि निर्णय क्षेत्राधिकार के बिना था। न्यायालय के पास अपील को पुनरीक्षण में और पुनरीक्षण को अपील में परिवर्तित करने का विकल्प खुला था।

29. संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत दायर याचिका पर विचार करते हुए उच्च न्यायालय ने अपील को पुनरीक्षण में बदल दिया और जिला न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश को पुनरीक्षण पर पारित आदेश माना। इसके बाद मामले का गुण-दोष के आधार पर निर्णय लिया गया।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु हैं और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



30. संपत कुमार बनाम अय्याकन्नु 2002 (7) एससीसी 559 में, सुप्रीम कोर्ट ने सीपीसी के आदेश VI नियम 17 के प्रावधान और इस सवाल पर विचार किया कि क्या संशोधन के माध्यम से केवल स्थायी निषेधाज्ञा के लिए दायर किए गए मुकदमे को कब्जे की घोषणा और कब्जे की वसूली के लिए मुकदमे में बदलना जायज़ है। यह माना गया कि ऐसा किया जा सकता है क्योंकि संशोधन के माध्यम से जो बदलाव करने की मांग की गई थी, वह वादी द्वारा मांगी गई राहत की प्रकृति थी न कि मुकदमे की मूल संरचना।

31. सुजीर केशव नायक बनाम सुजीर गणेश नायक 1991 (1) एससीसी 731 में, सर्वोच्च न्यायालय एक ऐसे मामले पर विचार कर रहा था, जिसमें साझेदारी के विघटन और लेखांकन के लिए एक मुकदमा दायर किया गया था और सवाल यह था कि क्या न्यायालय शुल्क की गणना भागीदारी में वादी के हिस्से के मूल्य के आधार पर की जानी है, जैसा कि उसके द्वारा अनुमानित किया गया है या न्यायालय द्वारा पाया गया है? इस मामले के तथ्य पूरी तरह से अलग होने के कारण यह लागू नहीं है और इसलिए इस पर विस्तार से विचार नहीं किया जा रहा है।

32. मधुसूदन दास अग्रवाल एवं अन्य बनाम बनारस हिंदू विश्वविद्यालय एवं अन्य 2015 (7) एडीजे 361 में, यह न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत एक याचिका पर विचार कर रहा था, जो सिविल जज (वरिष्ठ डिवीजन), मोहन लाल गंज, लखनऊ की अदालत में बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के खिलाफ सीपीसी की धारा 92 के तहत दायर किए गए मुकदमे से उत्पन्न हुई थी, जिसमें बीएचयू को वक्फ शाह बनारसी दास के ट्रस्टी के पद से हटाने और उसके मामले में एक नए ट्रस्टी की नियुक्ति के लिए कहा गया था।

33. उच्च न्यायालय में विचारणीय प्रश्न यह था कि आदेश VII, नियम 10 सीपीसी के अन्तर्गत, मुकदमे के किसी भी चरण में, यदि न्यायालय की राय है कि मुकदमा गलत तरीके से दायर किया गया है, तो उसे उचित न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करने के लिए वापस किया जाना चाहिए। वाद वापस करने पर, सीपीसी विशेष रूप से बिना किसी पूर्व सूचना के सुनवाई का प्रावधान करती है। यदि जिला न्यायाधीश, लखनऊ के समक्ष धारा 24(5) सीपीसी के अन्तर्गत मुकदमा सिविल न्यायाधीश (वरिष्ठ खण्ड), मोहन लाल गंज, लखनऊ के न्यायालय से जिला न्यायाधीश के न्यायालय में स्थानांतरित करने के लिए आवेदन दायर किया गया था, तो क्या स्थानांतरण पर मुकदमा बिना किसी पूर्व सूचना के आगे बढ़ना चाहिए था?

34. इस न्यायालय ने माना कि हस्तांतरित न्यायालय को या तो इसे फिर से सुनने या उस बिंदु से आगे बढ़ने का अधिकार है जिस पर इसे स्थानांतरित या वापस लिया गया था। धारा 24 का दूसरा भाग उपधारा (5) में है। धारा 24 की उपधारा (5) के तहत, एक वाद या कार्यवाही को

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



उस न्यायालय से स्थानांतरित किया जा सकता है जिसके पास इसे सुनने का अधिकार नहीं है और जहां ऐसा स्थानांतरण या वापसी की जाती है, पूरे साक्ष्य को रिकॉर्ड करने का एक नया अभ्यास अनावश्यक रूप से निर्णय में देरी का कारण बनेगा। स्पष्ट रूप से, मधुसूदन दास अग्रवाल और अन्य बनाम बनारस हिंदू विश्वविद्यालय और अन्य 2015 (7) एडीजे 361 में इस न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय मामले के तथ्यों के लिए लागू नहीं है।

35. इस न्यायालय के समक्ष विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या लघु वाद न्यायालय के न्यायाधीश जो सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिवीजन) के रूप में भी कार्य कर रहे थे, एससीसी मुकदमे को नियमित मुकदमे में परिवर्तित कर सकते थे?

36. यह तर्क दिया गया है कि दो मुकदमों की प्रकृति अलग-अलग है, एक मकान मालिक और किरायेदार के संबंध को निर्धारित करने के लिए एक सारांश कार्यवाही है और दूसरा सीपीसी के तहत एक नियमित कार्यवाही है जिसके लिए सीपीसी के तहत निर्धारित प्रक्रिया का पालन करके विस्तृत सुनवाई की आवश्यकता है, ऐसे में इस तरह के रूपांतरण का निर्देश नहीं दिया जा सकता था।

37. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुनने तथा अभिलेख पर प्रस्तुत दलीलों का अवलोकन करने के पश्चात, यह न्यायालय पाता है कि जब वाद दायर किया गया था, तो वाद के वाद शीर्षक में उल्लेख था कि यह सादाबाद हाथरस के न्यायाधीश लघु वाद/सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिवीजन) के न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जा रहा था, तथा शीर्षक में इसे एस.सी.सी. वाद संख्या शून्य, 2010 के रूप में दर्शाया गया था। साथ ही, वाद के प्रथम पृष्ठ पर उल्लेख किया गया था कि यह संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 111(एच) के अंतर्गत एक आवेदन है। प्रार्थना खण्ड में दावा की गई राहत का उल्लेख न्यायालय प्रक्रिया के माध्यम से किरायेदार को बेदखल करने तथा न्यायालय द्वारा नियुक्त आयुक्त के माध्यम से कब्जा दिलाने तथा मुकदमेबाजी की लागत देने के लिए किया गया था।

38. धारा 111 के अन्तर्गत अचल सम्पत्ति के पट्टे के निर्धारण के लिए विभिन्न प्रावधान दिए गए हैं। सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम की धारा 111 को नीचे उद्धृत किया जा रहा है:-

“111. पट्टे का निर्धारण। अचल सम्पत्ति का पट्टा निम्नलिखित निर्धारित करता है-

(क) उसके द्वारा सीमित समय बीत जाने पर;

(ख) जहां ऐसा समय किसी घटना के घटित होने पर सशर्त सीमित है-

ऐसी घटना के घटित होने पर;

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(ग) जहां सम्पत्ति में पट्टाकर्ता का हित किसी घटना के घटित होने पर समाप्त हो जाता है या उसका निपटान करने की उसकी शक्ति केवल उस घटना के घटित होने तक ही सीमित है-

ऐसी घटना के घटित होने पर;

(घ) यदि सम्पूर्ण सम्पत्ति में पट्टेदार और पट्टाकर्ता के हित एक ही समय में एक ही व्यक्ति में एक ही अधिकार में निहित हो जाते हैं;

(ङ) स्पष्ट समर्पण द्वारा; अर्थात्, यदि पट्टेदार आपसी सहमति से पट्टे के अंतर्गत अपना हित पट्टाकर्ता को सौंप देता है;

(च) निहित समर्पण द्वारा;

(छ) जब्ती द्वारा; अर्थात्, (1) यदि पट्टेदार किसी ऐसी स्पष्ट शर्त को तोड़ता है जो यह प्रावधान करती है कि उसके उल्लंघन पर पट्टाकर्ता पुनः प्रवेश कर सकता है; या (2) यदि पट्टेदार किसी तीसरे व्यक्ति में शीर्षक स्थापित करके या स्वयं शीर्षक का दावा करके अपने चरित्र को त्याग देता है; 2[या (3) पट्टेदार को दिवालिया घोषित कर दिया जाता है और पट्टे में यह प्रावधान है कि ऐसी घटना होने पर पट्टाकर्ता पुनः प्रवेश कर सकता है]; और 3[इनमें से किसी भी मामले में] पट्टाकर्ता या उसका हस्तान्तरित व्यक्ति पट्टे का निर्धारण करने के अपने इरादे की लिखित सूचना पट्टेदार को देता है;

(एच) पट्टे का निर्धारण करने, या छोड़ने, या छोड़ने के इरादे से नोटिस की समाप्ति पर, पट्टे पर दी गई संपत्ति, एक पक्ष द्वारा दूसरे पक्ष को विधिवत दी गई।

(जोर दिया गया)

39. यह स्पष्ट है कि धारा 111 उस आकस्मिकता से संबंधित है, जहां अचल संपत्ति का पट्टा निर्धारित किया जा सकता है। हालांकि, यह इस बात पर चर्चा नहीं करता कि पट्टेदार को बेदखल करने के लिए ऐसा वाद नियमित सिविल न्यायालय के समक्ष नियमित सिविल मुकदमे के रूप में दायर किया जाना था या फिर इसे न्यायाधीश लघु वाद न्यायालय के समक्ष दायर किया जाना था। इसे सिविल प्रक्रिया संहिता और प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार निर्धारित किया जाना है।

40. जहां धारा 111(एच) के तहत नोटिस द्वारा पट्टे को समाप्त किया जाता है, वहां पुनः प्रवेश की शक्ति के अभाव में, केवल पट्टे की समाप्ति के कारण बेदखली का आदेश दिया जा सकता है, मेरवानजी नानाभाय मर्चेट बनाम भारत संघ और अन्य 1979 (4) एससीसी 734 में सर्वोच्च न्यायालय के तीन न्यायाधीशों के निर्णय में, सर्वोच्च न्यायालय ने देखा कि जब बॉम्बे रेंट एक्ट, 1947 के तहत दिए गए पुनः प्रवेश के अधिकार पट्टे के कामों की शर्तों के अनुसार मौजूद नहीं थे और पक्षों के बीच किरायेदारी की समाप्ति के आधार पर बेदखली के लिए

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



मुकदमा प्रांतीय लघु कारण न्यायालय अधिनियम के तहत विचार किया जा सकता है। एससीसी न्यायालय के पास कुछ मामलों में विशेष अधिकार क्षेत्र है।

41. प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम की धारा 33 के तहत, एक न्यायालय जिसे उस अधिकार क्षेत्र के प्रयोग के संबंध में लघु वाद न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में निवेश किया गया है, और उसी न्यायालय को एक सिविल प्रकृति के मुकदमे में अपने अधिकार क्षेत्र के प्रयोग के संबंध में, जो लघु वाद न्यायालय द्वारा संज्ञेय नहीं है, अधिनियम और सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रयोजनों के लिए अलग-अलग न्यायालय माना जाएगा। इस प्रकार, न्यायाधीश लघु वाद न्यायालय, हालांकि सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिवीजन) का न्यायालय भी हो सकता है, लेकिन यह एससीसी मुकदमे को नियमित सिविल मुकदमे में परिवर्तित नहीं कर सकता था। न्यायाधीश लघु वाद न्यायालय प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम की धारा 23 के तहत केवल तभी शिकायत वापस कर सकता था, जब प्रश्नगत संपत्ति के शीर्षक के संबंध में कोई विवाद हो। इस मामले में, किरायेदार द्वारा ऐसा कोई विवाद नहीं उठाया गया था। उन्होंने मकान मालिक और किराएदार के रिश्ते को स्वीकार किया था, लेकिन आरोप लगाया था कि वह डिफॉल्टर नहीं थे और किराया बकाया नहीं था।

42. इस रिट याचिका में न्यायाधीश लघु कारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश धारा 151 सीपीसी के तहत निहित शक्ति का प्रयोग करके मुकदमे को परिवर्तित करने के लिए पारित नहीं किया जा सकता था।

43. ओम प्रकाश अग्रवाल बनाम विशन दयाल राजपूत 2018 एससीसी ऑनलाइन एससी 1942 में, सुप्रीम कोर्ट ने छोटे मामलों और पट्टेदार के बीच मुकदमों से संबंधित मामलों की सुनवाई के लिए एससीसी न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र में किए गए विभिन्न संशोधनों पर विचार करते हुए कानून की विस्तृत व्याख्या की है। निर्णय के प्रासंगिक पैराग्राफ नीचे उद्धृत किए जा रहे हैं:-

“7. तत्कालीन उत्तर-पश्चिमी प्रांतों में सिविल न्यायालयों के गठन, अधिकार क्षेत्र के संबंध में दो अधिनियम अर्थात् (i) बंगाल, आगरा, असम सिविल न्यायालय अधिनियम, 1887 और (ii) प्रांतीय छोटे मामले न्यायालय अधिनियम, 1887 पारित किए गए थे, दोनों को 01.07.1887 से लागू किया जा रहा है। बंगाल, आगरा और असम सिविल न्यायालय अधिनियम 1887 बंगाल, उत्तर-पश्चिमी प्रांतों और असम में सिविल न्यायालयों से संबंधित कानून को समेकित और संशोधित करने के लिए अधिनियमित किया गया था।

8. धारा 25 अधीनस्थ न्यायाधीशों और मुंसिफों को लघु वाद न्यायालय का अधिकार क्षेत्र सौंपने की शक्ति से संबंधित है। उत्तर प्रदेश राज्य में लागू अधिनियम की धारा 25

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



इस प्रकार है: "[25.[1] उच्च न्यायालय सरकारी राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, ऐसी स्थानीय सीमाओं के भीतर, जैसा वह उचित समझे, किसी सिविल न्यायाधीश या मुंसिफ को, प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम, 1887 के अधीन लघु वाद न्यायालय के न्यायाधीश का अधिकार प्रदान कर सकता है, ऐसे न्यायालयों द्वारा संज्ञेय वादों के विचारण के लिए, जो पांच हजार रुपए से अनधिक मूल्य के हों, जैसा वह उचित समझे, और इस प्रकार प्रदत्त किसी अधिकार को वापस ले सकता है: बशर्ते कि उक्त अधिनियम की धारा 15 की उपधारा (2) के परंतुक में निर्दिष्ट प्रकृति के वादों के संबंध में, इस उपधारा में पांच हजार रुपए के संदर्भ को पच्चीस हजार रुपए के संदर्भ के रूप में समझा जाएगा।]

[(2) उच्च न्यायालय सरकारी राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, किसी जिला न्यायाधीश या अपर जिला न्यायाधीश को प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम के अधीन लघु वाद न्यायालय के न्यायाधीश का अधिकार प्रदान कर सकता है, 1887, पट्टेदार द्वारा पट्टे के निर्धारण के पश्चात् भवन से पट्टेदार को बेदखल करने अथवा पट्टे की अवधि के दौरान उस पर कब्जे की अवधि के लिए उससे किराया वसूलने अथवा पट्टे की अवधि के दौरान उस पर कब्जे के लिए प्रतिकर अथवा पट्टे के निर्धारण के पश्चात् उस पर कब्जे के लिए प्रतिकर वसूलने के लिए पट्टाकर्ता द्वारा दायर सभी मुकदमों (उनके मूल्य पर ध्यान दिए बिना) की सुनवाई के लिए, तथा इस प्रकार प्रदत्त किसी भी अधिकारिता को वापस ले सकता है।

स्पष्टीकरण- इस उपधारा के प्रयोजनों के लिए, अभिव्यक्ति 'निर्माण' का वही अर्थ है जो उक्त अधिनियम की दूसरी अनुसूची के अनुच्छेद (4) में है। [(3)] x x x]

[(4) जहां लघु वाद न्यायालय के न्यायाधीश का अधिकार क्षेत्र किसी जिला न्यायाधीश या अतिरिक्त जिला न्यायाधीश को धारा के तहत अधिसूचना द्वारा प्रदान किया जाता है, वहां प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम, 1887 की धारा 15 में निहित किसी भी बात के बावजूद, उपधारा (2) में निर्दिष्ट सभी वाद लघु वाद न्यायालय द्वारा संज्ञेय होंगे।

9. प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम, 1887 को प्रेसिडेंसी शहर से बाहर स्थापित लघु वाद न्यायालयों से संबंधित कानून को समेकित और संशोधित करने के लिए अधिनियमित किया गया था। जैसा कि नाम से पता चलता है, प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम 1887 को "लघु वाद" से निपटने के लिए अधिनियमित किया गया था। अधिनियम का उद्देश्य छोटे वादों से निपटने के लिए एक अलग न्यायालय बनाना

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



था। उद्देश्य स्पष्ट रूप से यह था कि छोटे वादों का शीघ्रता से निपटारा किया जा सके। छोटे वादों से निपटने के लिए एक सारांश प्रक्रिया की भी परिकल्पना की गई थी।

10. ब्लैक के कानून शब्दकोश में "लघु दावा न्यायालय" का उल्लेख किया गया है, जिसने इसे निम्नलिखित तरीके से समझाया: "एक न्यायालय जो अनौपचारिक रूप से और शीघ्रता से उन दावों का निर्णय करता है जो निर्दिष्ट मौद्रिक राशि से कम हर्जाना मांगते हैं, आमतौर पर छोटे खातों या ऋणों को इकट्ठा करने के लिए दावा करते हैं। इसे लघु ऋण न्यायालय भी कहा जाता है; सुलह न्यायालय।"

11. अधिनियम के उद्देश्यों के कथनों से स्पष्ट है कि इसका उद्देश्य छोटे दावों के लिए त्वरित मशीनरी उपलब्ध कराना था। यद्यपि, सिविल प्रक्रिया संहिता छोटे वाद न्यायालय अधिनियम की धारा 17 के आधार पर लागू होती है, लेकिन सिविल प्रक्रिया संहिता स्वयं आदेश एल में छोटे वाद मामलों के लिए सी.पी.सी. के विभिन्न नियमों और आदेशों को छोड़कर एक सरलीकृत प्रक्रिया प्रदान करती है। सी.पी.सी. का आदेश एल इस प्रकार है:

"1. प्रांतीय छोटे वाद न्यायालय- इसके बाद निर्दिष्ट प्रावधान प्रांतीय छोटे वाद न्यायालय अधिनियम, 1887 (1887 का 9) [या बरार छोटे वाद न्यायालय कानून, 1905 के तहत] या छोटे वाद न्यायालय [उक्त अधिनियम या कानून के तहत] के अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने वाले न्यायालयों पर विस्तारित नहीं होंगे, [या भारत के किसी भी हिस्से में न्यायालयों पर, जिस पर उक्त अधिनियम लागू नहीं होता है] तदनुरूपी अधिकारिता का प्रयोग करना] अर्थात्

(क) इस अनुसूची का उतना भाग जो निम्न से संबंधित है

- (i) लघु वाद न्यायालय के संज्ञान से छूटे हुए वाद या ऐसे वादों में डिक्री का निष्पादन;
- (ii) अचल संपत्ति के विरुद्ध डिक्री का निष्पादन या साझेदारी संपत्ति में भागीदार का हित;
- (iii) मुद्दों का निपटारा; और

(ख) निम्नलिखित नियम और आदेश:

आदेश II, नियम 1 (वाद की रूपरेखा);

आदेश X, नियम 3 (पक्षकारों की परीक्षा का अभिलेख);

आदेश XV, नियम 4 के उतने भाग को छोड़कर जो तुरंत निर्णय सुनाने का प्रावधान करता है;

आदेश XVIII, नियम 5 से 12 (साक्ष्य);

आदेश XLI से XLV (अपील);

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



आदेश XLVII, नियम 2, 3, 5, 6, 7 (समीक्षा);

आदेश LI।”

12. धारा 5 में राज्य सरकार द्वारा लघु वाद न्यायालयों की स्थापना का प्रावधान किया गया है। अधिनियम का अध्याय III "लघु वाद न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र" से संबंधित है। अधिनियम की धारा 15 में प्रावधान है:

15. लघु वाद न्यायालयों द्वारा वादों का संज्ञान (1) लघु वाद न्यायालय द्वितीय अनुसूची में निर्दिष्ट वादों का संज्ञान लघु वाद न्यायालय से अपेक्षित वादों के रूप में नहीं लेगा। (2) उस अनुसूची में निर्दिष्ट अपवादों और वर्तमान में लागू किसी अधिनियम के प्रावधानों के अधीन, सिविल प्रकृति के सभी वाद जिनका मूल्य पांच सौ रुपये से अधिक नहीं है, लघु वाद न्यायालय द्वारा संज्ञेय होंगे। (3) पूर्वोक्त विषय के अधीन, [राज्य सरकार] लिखित आदेश द्वारा निर्देश दे सकती है कि सिविल प्रकृति के सभी मुकदमे, जिनका मूल्य एक हजार रुपये से अधिक नहीं है, आदेश में उल्लिखित लघु वाद न्यायालय द्वारा संज्ञेय होंगे।”

13. उत्तर प्रदेश सिविल कानून (संशोधन) अधिनियम, 1972 (यू.पी. अधिनियम संख्या 37, 1972) राष्ट्रपति की सहमति से उत्तर प्रदेश विधानमंडल द्वारा अधिनियमित किया गया था। यू.पी. अधिनियम संख्या 37, 1972 के उद्देश्यों और कारणों का कथन, जो संशोधन की योजना और उद्देश्य को समझने के लिए प्रासंगिक हैं, निम्नलिखित प्रभाव के हैं:

"प्रस्तावना नोट - उद्देश्यों और कारणों का कथन। (1) प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम, 1887, मुकदमों के परीक्षण में एक संक्षिप्त प्रक्रिया प्रदान करता है। इसके अलावा, ऐसे न्यायालयों के फैसले अपील योग्य नहीं हैं, और केवल एक संशोधन की आवश्यकता है। बशर्ते कि ऐसी अदालतें अचल संपत्ति पर कब्जे के मुकदमों का संज्ञान नहीं ले सकतीं। उत्तर प्रदेश नगरीय भवन (किराए पर देने, किराया देने और बेदखली का विनियमन) अधिनियम, 1972 (उत्तर प्रदेश अधिनियम XIII, 1972) की धारा 20(6) में हाल ही में किए गए संशोधन के द्वारा किरायेदार के विरुद्ध उसकी किरायेदारी समाप्त होने के पश्चात बेदखली के मुकदमों को इस अपवाद के दायरे से बाहर कर दिया गया है और उन्हें लघु वाद अदालतों द्वारा संज्ञेय बना दिया गया है। ऐसा इसलिए किया गया है क्योंकि ऐसे मुकदमों में मुद्दे आमतौर पर सरल होते हैं। ऐसे मामलों में जहां स्वामित्व का प्रश्न मुद्दा बनता है, लघु वाद अदालत को वाद को नियमित अदालत में प्रस्तुत करने के लिए वापस करने का अधिकार है। अब प्रस्तावित है कि उक्त संशोधन को उत्तर प्रदेश अधिनियम XIII, 1972 से हटा दिया जाए और इसके स्थान पर प्रांतीय लघु वाद

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



न्यायालय अधिनियम, 1887 में एक व्यापक संशोधन को सीधे शामिल किया जाए। ताकि सभी इमारतें, न कि केवल वे इमारतें जो यू.पी. अधिनियम XIII, 1972 द्वारा शासित हैं, इसके अंतर्गत आच्छादित हो सकें। यह भी प्रस्तावित है कि ऐसे मुकदमों के संबंध में साधारण लघु वाद न्यायालयों को 5,000 रुपये तक के मूल्य के मामलों का निर्णय करने का अधिकार क्षेत्र प्रदान किया जा सकता है (कुछ जिलों में केवल 2,000 रुपये और अधिकांश जिलों में 1,000 रुपये के बजाय, जैसा कि वर्तमान में है) और उच्च मूल्य के मामलों का निर्णय लघु वादों के न्यायाधीश के रूप में बैठे जिला न्यायाधीशों द्वारा किया जा सकता है, और जिला न्यायाधीश के ऐसे निर्णयों के विरुद्ध संशोधन उच्च न्यायालय में होगा, जबकि अन्य लघु वाद न्यायालयों के निर्णयों के विरुद्ध संशोधन जिला न्यायाधीश के समक्ष जारी रह सकता है।

14. धारा 15(1) के अनुसार लघु वाद न्यायालय द्वितीय अनुसूची में निर्दिष्ट वादों का संज्ञान लेने में सक्षम नहीं था। अधिनियम की द्वितीय अनुसूची का खण्ड (4) इस प्रकार था: "(4) अचल सम्पत्ति के कब्जे के लिए या ऐसी सम्पत्ति में किसी हित की वसूली के लिए वाद;"

15. अधिनियम संख्या 37, 1972 द्वारा अधिनियम की धारा 15, धारा 25 और द्वितीय अनुसूची में संशोधन किए गए। उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 37, 1972 की धारा 2, 3 और 4 में निम्नलिखित प्रावधान है:- "2. 1887 के अधिनियम IX की धारा 15 का संशोधन.-

उत्तर प्रदेश, जिसे इसके पश्चात् मूल अधिनियम कहा जाएगा, में लागू होने के लिए संशोधित प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम, 1887 की धारा 15 की उपधारा (3) में निम्नलिखित परंतुक जोड़ा जाएगा, अर्थात्:

"परन्तु यह कि पट्टाकर्ता द्वारा पट्टे के निर्धारण के पश्चात् भवन से पट्टेदार को बेदखल करने, या पट्टे की अवधि के दौरान उस पर कब्जे की अवधि के लिए उससे किराया वसूल करने, या पट्टे के ऐसे निर्धारण के पश्चात् उस पर कब्जे और उपयोग के लिए प्रतिकर वसूलने के लिए दायर किए गए वादों के संबंध में, इस उपधारा में दो हजार रुपए के संदर्भ को पांच हजार रुपए के संदर्भ के रूप में समझा जाएगा।

स्पष्टीकरण.--इस उपधारा के प्रयोजनों के लिए, 'भवन' शब्द का वही अर्थ है जो द्वितीय अनुसूची के अनुच्छेद (4) में है।"

3. 1887 के अधिनियम IX की धारा 25 का संशोधन.-

मूल अधिनियम की धारा 25 में निम्नलिखित परंतुक जोड़ा जाएगा, अर्थात्:

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



"बशर्ते कि लघु वाद न्यायाधीश के अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने वाले जिला न्यायाधीश या अतिरिक्त जिला न्यायाधीश द्वारा तय किए गए किसी मामले के संबंध में, इस धारा के तहत पुनरीक्षण की शक्ति उच्च न्यायालय में निहित होगी।"

4. 1887 के अधिनियम IX की दूसरी अनुसूची का संशोधन.-- मूल अधिनियम की दूसरी अनुसूची में अनुच्छेद (4) के स्थान पर निम्नलिखित अनुच्छेद प्रतिस्थापित किया जाएगा, अर्थात् "(4) अचल संपत्ति के कब्जे के लिए या ऐसी संपत्ति में किसी हित की वसूली के लिए वाद, किन्तु इसमें पट्टेदार द्वारा पट्टे के निर्धारण के पश्चात् किसी भवन से पट्टेदार को बेदखल करने और पट्टे के निर्धारण के पश्चात् उस भवन के उपयोग और कब्जे के लिए उससे प्रतिकर की वसूली के लिए वाद सम्मिलित नहीं है।"

स्पष्टीकरण.-- इस अनुच्छेद के प्रयोजनों के लिए, अभिव्यक्ति 'भवन' का अर्थ आवासीय या गैर-आवासीय छत वाली संरचना है, और इसमें ऐसी इमारत से अनुलग्न कोई भूमि (किसी उद्यान सहित), गैरेज और आउट-हाउस शामिल हैं, और इसमें इमारत के अधिक लाभकारी उपयोग के लिए उसमें लगाई गई कोई फिटिंग और फिक्सचर भी शामिल हैं।"

16. एक और संशोधन, जो यू.पी. अधिनियम संख्या 37, 1972 द्वारा बंगाल, आगरा और असम सिविल न्यायालय अधिनियम की धारा 25 में संशोधन किया गया था, जो अधिनियम की धारा 5 द्वारा किया गया था, जिसका प्रभाव इस प्रकार है: "

"5. अधिनियम XII, 1887 की धारा 25 में संशोधन। बंगाल, आगरा और असम सिविल न्यायालय अधिनियम, 1887 की धारा 25, जैसा कि उत्तर प्रदेश में इसके लागू होने में संशोधित किया गया है, को उप-धारा (1) के रूप में पुनः क्रमांकित किया जाएगा, और (i) उप-धारा (1) में, जैसा कि पुनः क्रमांकित किया गया है, विद्यमान परंतुक के स्थान पर निम्नलिखित परंतुक प्रतिस्थापित किया जाएगा, अर्थात्: "परन्तु उक्त अधिनियम की धारा 15 की उप-धारा (3) के परंतुक में निर्दिष्ट प्रकृति के वादों के संबंध में इस उप-धारा में एक हजार रुपए और पांच सौ रुपए के संदर्भों को क्रमशः पांच हजार रुपए और एक हजार रुपए के संदर्भों के रूप में समझा जाएगा।"

(ii) उपधारा (1) के पश्चात्, जैसा कि पुनः क्रमांकित किया गया है, निम्नलिखित उपधारा जोड़ी जाएगी, अर्थात्:

"(2) राज्य सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, किसी जिला न्यायाधीश या अपर जिला न्यायाधीश को प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम, 1887 के अधीन लघु वाद न्यायालय के न्यायाधीश का अधिकार क्षेत्र प्रदान कर सकेगी, जो पट्टाकर्ता द्वारा पट्टे के निर्धारण के पश्चात् भवन से पट्टेदार को बेदखल करने के लिए, या पट्टे की अवधि

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



के दौरान उस पर कब्जे की अवधि के संबंध में उससे किराया वसूलने के लिए, या पट्टे के ऐसे निर्धारण के पश्चात् उस पर कब्जे के लिए प्रतिकर वसूलने के लिए दायर किए गए सभी वादों (उनके मूल्य पर विचार किए बिना) के लिए होगा, तथा इस प्रकार प्रदत्त किसी अधिकार क्षेत्र को वापस ले सकेगी।

स्पष्टीकरण इस उपधारा के प्रयोजनों के लिए, अभिव्यक्ति 'भवन' का वही अर्थ है जो उक्त अधिनियम की दूसरी अनुसूची के अनुच्छेद (4) में है। (3) राज्य सरकार आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा इस धारा के अंतर्गत अपनी शक्तियां उच्च न्यायालय को सौंप सकती है।

18. प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम की धारा 15 में उपधारा (2) और (3) के स्थान पर उत्तर प्रदेश अधिनियम 17, 1991 द्वारा 15.01.1991 से निम्नलिखित प्रतिस्थापित किया गया: “(2) उस अनुसूची में निर्दिष्ट अपवादों और किसी भी समय लागू अधिनियम के प्रावधानों के अधीन रहते हुए, सिविल प्रकृति के सभी मुकदमे, जिनका मूल्य पांच हजार रुपये से अधिक नहीं है, लघु वाद न्यायालय द्वारा संज्ञेय होंगे; बशर्ते कि पट्टेदार द्वारा पट्टे के निर्धारण के बाद भवन से पट्टेदार को बेदखल करने या पट्टे की अवधि के दौरान कब्जे की अवधि के संबंध में उससे किराया वसूलने या पट्टे के निर्धारण के बाद उसके उपयोग और कब्जे के लिए मुआवजे की वसूली के लिए दायर किए गए मुकदमों के संबंध में, संदर्भ इस उपधारा में पाँच हजार रुपए तक का अर्थ पच्चीस हजार रुपए के संदर्भ के रूप में लगाया जाएगा। स्पष्टीकरण इस उपधारा के प्रयोजनों के लिए, अभिव्यक्ति 'भवन' का वही अर्थ है जो द्वितीय अनुसूची में अनुच्छेद (4) में है।

(जोर दिया गया)

44. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि जहां तक किरायेदार की बेदखली से संबंधित मुकदमों का संबंध है, एससीसी न्यायालयों के पास विशेष अधिकार क्षेत्र है। प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम, 1887 और बंगाल, आगरा और असम सिविल न्यायालय अधिनियम, 1887 में किए गए विभिन्न संशोधनों में, विधानमंडल ने ऐसे एससीसी न्यायालयों के समय-समय पर केवल आर्थिक अधिकार क्षेत्र में वृद्धि की है और यह भी स्पष्ट किया है कि प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम की दूसरी अनुसूची के अनुच्छेद 4 में पट्टेदार द्वारा पट्टे के निर्धारण के बाद भवन से बेदखल करने के लिए दायर किया गया वाद शामिल नहीं होगा। इस प्रकार विधानमंडल ने स्पष्ट किया है कि किरायेदार के विरुद्ध किरायेदारी की अवधि समाप्त होने के बाद बेदखली के मुकदमे को अनुच्छेद 4 के तहत अपवाद से बाहर कर दिया गया है और इसे लघु वाद न्यायालयों द्वारा संज्ञेय बना दिया गया है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



45. यह स्पष्ट है कि केवल लघु वाद न्यायालय के पास ही किराया नियंत्रण अधिनियम के दायरे से बाहर आने वाली संपत्तियों में पट्टेदार को बेदखल करने के लिए पट्टाकर्ता द्वारा दायर किए गए मुकदमों की सुनवाई करने का विशेष अधिकार है। इस प्रकार, न्यायाधीश लघु वाद न्यायालय यानी सिविल जज (जूनियर डिवीजन) ने एससीसी मुकदमे को नियमित मुकदमे में बदलने का निर्देश देते हुए संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम के प्रावधानों की गलत व्याख्या की।

46. एससीसी न्यायालय को ऐसे मुकदमे की सुनवाई करने का विशेष अधिकार है। प्रतिवादी/मकान मालिक द्वारा दायर मुकदमे पर केवल लघु वाद न्यायालय में ही विचार किया जा सकता है, इसलिए निम्न न्यायालयों द्वारा पारित आदेश इस आधार पर भी निरस्त किए जाने योग्य हैं।

47. किराए/क्षतिपूर्ति/अंतरिम लाभ के बकाया भुगतान के लिए कोई राहत मांगे बिना केवल बेदखली के लिए दायर किए गए मुकदमे में, केवल यह कहा जा सकता है कि मकान मालिक ने दूसरी या परिणामी राहत के अपने अधिकार को खो दिया है। उक्त मुकदमा प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम के तहत दायर किया गया था, इसलिए इसे उसी रूप में माना जाना चाहिए, क्योंकि किरायेदारी से संबंधित ऐसे मामलों में न्यायाधीश लघु वाद न्यायालय के पास विशेष अधिकार क्षेत्र है। विद्वान न्यायाधीश लघु वाद न्यायालय को मुकदमे का फैसला एससीसी मुकदमे के रूप में करना चाहिए था।

48. चूंकि प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम, 1887 की धारा 17 के अंतर्गत सिविल प्रक्रिया संहिता के आवेदन पर तब तक रोक नहीं है, जब तक कि सी.पी.सी. या प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम द्वारा अन्यथा प्रावधान न किया गया हो, लघु वाद न्यायालय में उसके द्वारा संज्ञेय सभी वादों में तथा ऐसे वाद से उत्पन्न सभी कार्यवाहियों में सी.पी.सी. के अंतर्गत निर्धारित प्रक्रिया का पालन किया जाएगा।

49. 1887 के अधिनियम की धारा 15 और 16 के तहत लघु वाद न्यायालय को विशेष अधिकारिता प्राप्त है और लघु वाद न्यायालय द्वारा संज्ञेय वाद किसी अन्य न्यायालय द्वारा नहीं चलाया जा सकता। केवल लघु वाद न्यायालय के न्यायाधीश ही किराएदार द्वारा दुकान का बकाया किराया न चुकाए जाने के आधार पर किराएदार को बेदखल करने के लिए दायर वाद पर निर्णय दे सकते थे, जिस पर उत्तर प्रदेश किराया नियंत्रण अधिनियम, 1972 के प्रावधान लागू नहीं होते।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



50. विद्वान ट्रायल कोर्ट/सिविल जज (जूनियर डिवीजन), सादाबाद, हाथरस द्वारा पारित दिनांक 9.3.2018 के आदेश के साथ-साथ जिला जज, हाथरस द्वारा एससीसी संशोधन संख्या 101/2018 में पारित दिनांक 9.4.2018 के आदेश को इस प्रकार रद्द किया जाना चाहिए और इसे रद्द किया जाता है। मामले को शीघ्र निर्णय के लिए न्यायाधीश लघु वाद न्यायालय को भेजा जाता है।

51. चूंकि साक्ष्य पहले ही प्रस्तुत किए जा चुके हैं और एस.सी.सी. मुकदमा वर्ष 2010 में किसी समय दायर किया गया था, इसलिए यह अपेक्षित है कि विद्वान न्यायाधीश लघु वाद न्यायालय उक्त मुकदमे का निर्णय इस आदेश की प्रमाणित प्रति उनके समक्ष प्रस्तुत किए जाने की तिथि से चार महीने की अवधि के भीतर कर सकते हैं।

आदेश दिनांक: 10.01.2019

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।